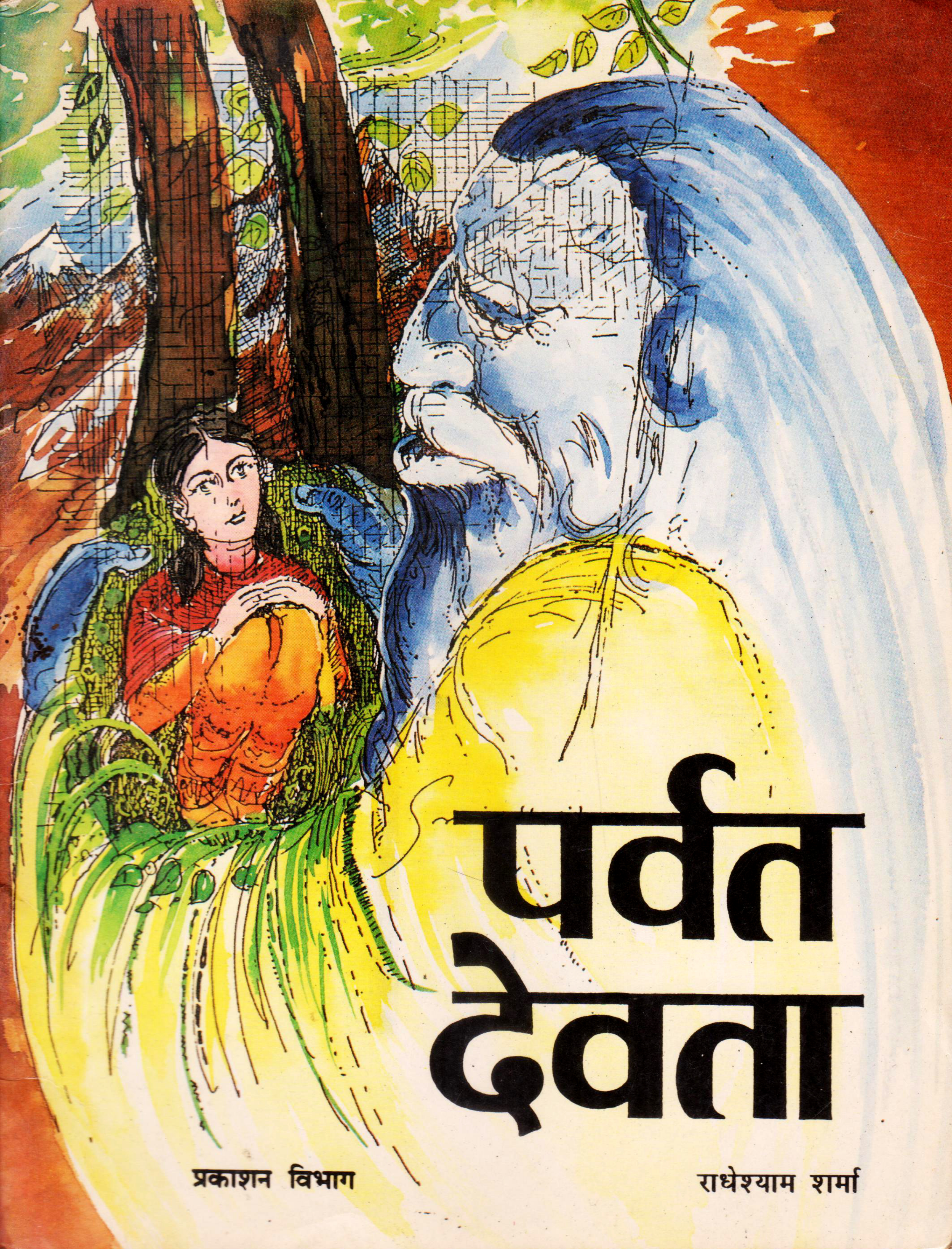


पर्वत देवता

प्रकाशन विभाग

राधेश्याम शर्मा

पर्वत देवता

राधेश्याम शर्मा

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : शक 1900 (फरवरी 1919)
द्वितीय संस्करण : शक 1911 (दिसंबर 1989)
तृतीय संस्करण : शक 1922 (2000)

ISBN : 81-230-0832-5

मूल्य : 30.00 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केंद्र • प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054
- कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001
- 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226001
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय, पब्लिक गार्डेंस, हैदराबाद-500004
- 'एफ' विंग, प्रथम तल, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034

विक्रय काउंटर • पत्र सूचना कार्यालय

- 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003
- सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर, (म.प्र.)
- बी-7, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर (राजस्थान)
- योजना (गुजराती) अंबिका काम्पलेक्स, प्रथम तल, यूको बैंक के ऊपर, पालदी, अहमदाबाद-380007
- योजना (असमिया) नौजान रोड, उजान बाजार, गुवाहाटी-781001

टाइप सैट : दिनेश चंद्र चौधरी

मुद्रक : आकाशदीप प्रिन्टर्स, 20, अन्सारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली-2.

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक विश्व बाल वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित की गई थी। पुस्तक काफी लोकप्रिय हुई थी। अतः अब हम इसका तृतीय संस्करण छाप रहे हैं। सुप्रसिद्ध बाल कथाकार श्री राधेश्याम शर्मा ने बालकों के मन को छूने वाली और उन्हें सहज ही हर्ष-विभोर कर देने वाली मनोरंजक कहानियां संकलित की हैं।

इन कहानियों को पढ़ते समय हमारे बाल पाठक जहां एक ओर भारत के स्वर्णिम युग की झांकी पा सकेंगे और महाभारत के कौरव युवराज दुर्योधन को महाराजा शल्य की सेवा करते देखेंगे, वहां वे दूसरे देश ईरान के स्वर्णिम युग का साक्षात्कार करेंगे। वस्तुतः 'तीर की उड़ान' कहानी ईरान की ही एक लोक कथा है; जिसमें एक वीर बालक का अदम्य साहस प्रदर्शित किया गया है।

इसी प्रकार की एक अन्य कहानी 'जब वे पहली बार आए' भी बालकों को बहुत पसंद आएगी। 'शेर से युद्ध', 'दोस्ती' और 'सेवा का फल' से भी वे शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे। एक साहसी बालक की सत्य कथा भी इसमें संकलित की गई है।

इन सबका उद्देश्य बाल समुदाय का चरित्र-निर्माण करना और साथ ही स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना है। हमारे बाल पाठकों को यह संकलन अवश्य भाएगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

–संपादक

अनुक्रम

पर्वत देवता

मसूरी से लगभग 40 किलोमीटर दूर मनसुखिया नामक गांव में एक गरीब परिवार रहता था। घर का मुखिया सुबह से शाम तक पड़ोस के कस्बे में मजदूरी करता। जब रात को अंधेरा होते-होते वह घर लौटता तो उसे अपनी दूसरी पत्नी की जली-कटी बातें सुनने को मिलतीं।

रोज-रोज की उस कलह का मुख्य कारण था, उसकी पहली पत्नी रत्ना की बेटी अन्नो। हालांकि अन्नो एक सुशील लड़की थी, जो अपनी सौतेली मां के इशारे पर सारा दिन नाचती रहती, लेकिन फिर भी उस बेचारी को अपनी सौतेली मां से फटकार और गाली-गलौज ही सुनने को मिलती।

अन्नो रोज-रोज की इस कलह से काफी तंग आ चुकी थी। हर रोज उसकी यही कोशिश होती कि उस दिन कलह न हो। लेकिन सौतेली मां किसी-न-किसी बात पर घर में झगड़ा कर ही देती थी।

अन्नो इस बात से उतनी ही दुखी थी, जितनी इस बात से कि उसकी सौतेली बहन कम्मो दिन भर आराम करती और फिर भी अच्छी-से-अच्छी सुविधाएं उसे दी जातीं। घर में अन्नो के पिता की जरा भी नहीं चलती थी। हर बात में उसकी सौतेली मां का ही हुक्म माना जाता। अन्नो की सौतेली मां अक्सर उससे पीछा छुड़ाने की तरकीबें सोचती रहती। एक बार उसने मन में सोचा–"जैसे ही बर्फ गिरनी शुरू हो, अन्नो को घर से निकाल बर्फीले जंगल में पहुंचा दिया जाए। कड़कती सर्दी में बर्फीले तूफान उसे हमेशा-हमेशा के लिए सुला देंगे।"

और जैसे ही पर्वतों की चोटियों पर बर्फ गिरनी शुरू हुई, उसकी मां ने अपने वृद्ध पति से कहा–"अन्नो को दूर किसी पहाड़ी चोटी पर छोड़ आओ।" यह सुनकर अन्नो का पिता बुरी तरह से गिड़गिड़ाने लगा और बोला– "भाग्यवान! ऐसा न करो, वरना मेरी बेटी जिन्दा ही बर्फ की चट्टानों में दबकर दम तोड़ देगी।" लेकिन उसने एक न सुनी।

अगले दिन सूर्योदय से पहले ही वृद्ध ने अन्नो को खच्चर पर बिठाया और दूर पहाड़ी पर छोड़ कर घर लौट आया। बेचारी अन्नो चीड़ के पेड़ों के नीचे सारा दिन भूखी-प्यासी बैठी रही। शाम होने पर जैसे-जैसे अंधेरा होता गया, वैसे-वैसे सर्दी बढ़ती चली गई।



चारों ओर बर्फ पड़ने और तेज हवा चलने से अन्नो का बुरा हाल हो रहा था। वह घुटनों को पेट से लगाए बुरी तरह से ठंड में अकड़ती जा रही थी। बेचारी करती भी क्या।

थोड़ी ही देर में हवा का एक तेज झोंका आया और आस-पास के वृक्ष चटके। लगता था जैसे कोई महाबली पुरुष एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर उछलता हुआ उसकी ओर बढ़ रहा है अन्नो ने धीरे से अपना चेहरा ऊपर उठाया और जैसे ही उसने आंखें खोलीं, सामने उसे विशालकाय आकृति नजर आई। इससे पहले कि अन्नो उस शक्ल को नीचे से ऊपर तक देखे, उसमें जोर की थिरकन हुई और उसमें से एक आवाज निकली, ''कहो बेटी, क्या हाल है तुम्हारे? तुम्हें ठंड तो नहीं लग रही? मैं इस पहाड़ का देव हूं। तुम्हें जो कुछ जरूरत हो, मांग लो।''

अन्नो ने श्रद्धापूर्वक कहा- ''नहीं देव, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे जरा भी ठंड नहीं लग रही है।'' इस उत्तर को सुन वह विशाल आकृति अंतर्धान हो गई। अन्नो ने सोने की कोशिश की, लेकिन उस कड़कती ठंड में भला उसे नींद कैसे आती?

लगभग एक घंटा बीता होगा कि आसपास के वृक्षों के चटकने की आवाज फिर आई। आवाज हर क्षण तेजी पकड़ती गई। कुछ ही क्षणों के बाद अन्नो के सामने धम्म से वही विशालकाय आकृति आकर खड़ी हो गई। उस समय तक बर्फ पड़नी शुरू हो गई थी। अन्नो का ठंड से बुरा हाल था। उस देव ने अपने प्रश्न को फिर दोहराया। लेकिन अन्नो ने सिर्फ यही कहा, ''भगवन्! मुझे ठंड नहीं सता रही है। मैं कुशल से हूं।'' फिर एक जोरदार हुंकार के साथ वह देव वहां से अंतर्धान हो गया।

रात्रि के दो पहर बीत चुके थे। सर्दी का कोई हिसाब नहीं था। अन्नो को पूरा यकीन हो चला था कि अगला दिन शुरू होते-होते वह इस बर्फीले इलाके में हमेशा-हमेशा के लिए खो जाएगी। वह ठंड से इधर-उधर असहाय नजरों से देख रही थी। उसके दांत बुरी तरह से किटकिटा रहे थे। घुटनों को पेट से लगाए वह चुपचाप गठरी बनी बैठी हुई थी। तभी आस-पास के वृक्षों की टहनियां जोर से खड़खड़ाईं और अगले ही क्षण वही देव अन्नो के सामने खड़ा हो गया। प्रश्न वही थे और उत्तर भी वही। वह देव अन्नो की इस बहादुरी और सहनशक्ति से बहुत खुश हुआ। तत्काल रेशम-सा मुलायम एक वस्त्र अन्नो के शरीर पर डाल वह देव वहां से गायब हो गया।

उस वस्त्र के ओढ़ते ही अन्नो की सर्दी भाग खड़ी हुई और कुछ ही क्षणों में वह गहरी नींद में सो गई।

अगले दिन उसकी सौतेली मां ने अपने पति से कहा, ''फौरन उस पर्वत शिखर की ओर रवाना हो जाओ यहां अपनी बेटी को छोड़कर आए हो और अन्नो की लाश को, जो बर्फीले तूफान में बर्फ बन गई होगी, उठा लाओ, जिससे उसका अंतिम संस्कार किया जा सके।''

वृद्ध बेचारा करता भी क्या! वह खच्चर लेकर उसी पर्वत शिखर की ओर रवाना हो गया।

रास्ते भर उसकी आंखों से आंसू बहते रहे। वह जानता था कि उसकी बेटी अन्नो दम तोड़ चुकी होगी। लेकिन निश्चित स्थान पर पहुंचकर जब उसने अन्नो को सही-सलामत पाया, तो उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। वह यह देखकर तो और भी विस्मित हो गया कि अन्नो जिस वस्त्र को लपेटे हुए वहां सो रही है, वह हीरे-जवाहरात से जड़ा एक बहुमूल्य शाल है। उसकी खुशी का ठिकाना न था। अपनी बेटी को लेकर वह दौड़ा-दौड़ा घर लौटा।

उसकी पत्नी ने जब सारी बात सुनी और वह बहुमूल्य शाल देखा तो वह भौंचक्की-सी रह गई। उसने सोचा कि आज वह अपनी बेटी कम्मो को उसी स्थान पर भेजेगी जिससे उसे भी ऐसा ही कीमती शाल मिल जाए।

अगले दिन उसने अपने पति को आदेश दिया कि वह उसी स्थान पर कम्मो को छोड़ आए। पति ने ऐसा ही किया। वह लड़की जंगल में बैठी जब ठंड से बुरी तरह अकड़ रही थी, तभी वह देव वहां आ पहुंचा। उसने पूछा, ''कहो बेटी, ठंड तो नहीं लग रही?'' कम्मो गुस्से से बोली- ''कौन है तू? व्यर्थ की बकवास कर रहा है।'' देव एक भयंकर हुंकार मारता हुआ वहां से गायब हो गया।

जैसे-जैसे रात का अंधेरा गहरा होता जा रहा था, बर्फीले तूफान में तेजी आती जा रही थी। कम्मो का ठंड से बुरा हाल हो रहा था। तभी आस-पास के वृक्षों की टहनियां चटकीं और भयंकर हुंकार के साथ वही देव फिर कम्मो के सामने आकर खड़ा हो गया। पहले की भांति उसने फिर कम्मो से पूछा, ''कहो, तुम्हें ठंड तो नहीं लग रही?'' अब तक कम्मो की खीज आ चुकी थी। फौरन चीख पड़ी, ''दुष्ट, तू फिर मुझे परेशान करने आ गया। भगवान करे यह पहाड़ फट जाए और तू इसमें धंस जाए।''

कम्मो के इस उत्तर से देव को बड़ा क्रोध आया। उसने एक भयंकर हुंकार भरी, जसके साथ ही एक तेज बर्फीला तूफान शुरू हो गया। चारों ओर बर्फ की जोरदार वर्षा होने लगी और थोड़ी ही देर में कम्मो बर्फ में दबकर हमेशा-हमेशा के लिए सो गई।

अगले दिन सूर्योदय होने से पूर्व ही उसकी मां ने अपने पति से कहा, ''अब फौरन कम्मो को उस स्थान से वापस ले जाओ। अब तक उसे शाल जरूर मिल गया होगा।'' जब बूढ़ा निश्चित स्थान पर पहुंचा तो उसने देखा कि कम्मो बर्फ में दबी पड़ी है। उसकी लाश को देख वह बड़ा दुखी हुआ। खच्चर पर उसे लाद कर घर लौट आया।

कम्मो की मां बड़ी आशा के साथ अपनी बेटी की प्रतीक्षा कर रही थी। जैसे ही दरवाजे पर दस्तक हुई, वह खुशी से उछलती हुई दरवाजे पर पहुंची। खच्चर की पीठ पर लदे कम्मो के शव को देख वह बुरी तरह से रो पड़ी और अगले ही क्षण बेहोशी की हालत में जमीन पर जा गिरी।

जब वे पहली बार आए

बात बहुत दिन पहले की है। ईरान के कुछ पारसी लोग भारत आना चाहते थे। उन दिनों भी भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान समूचे विश्व में चर्चा का विषय बना हुआ था। यही कारण था कि ईरान ही क्या, अन्य बहुत-से देशों के लोगों की भी इच्छा रहती थी कि वे भारत में आकर बसें। ईरान के पारसी लोग भी यही चाहते थे कि वे इस देश को अपना लें।



जो लोग भारत में प्रवेश चाहते थे, उन्होंने अपना एक दल बना लिया ओर सभी तैयारियां कर ईरान से कूच करने का समय तय कर लिया। निश्चित समय पर एक अच्छा खासा काफिला चल पड़ा। मर्द, औरतों और बच्चों का यह काफिला भारत की सीमा पर जब पहुंचा तब उसे भारतीय सीमा पर तैनात सैनिकों ने रोक लिया।

काफिले के सरदार ने कहा, "सरकार, आप हमें इस पवित्र देश में प्रवेश करने की आज्ञा दें। हम ईरान को छोड़ यहां बसने आए हैं।" सीमा पुलिस के कप्तान ने उनसे पूरी सहानुभूति दिखाई, लेकिन सीमा पार करने की अनुमति देने से साफ इन्कार कर दिया। कप्तान ने कहा "आप लोग इस सीमावर्ती राज्य के महाराजा से आज्ञा लिए बिना प्रवेश नहीं कर सकते। आप लोग यहीं ठहरें। हम राजाज्ञा की प्रतीक्षा करेंगे और यदि आज्ञा मिल गई तो आपको आगे बढ़ने दिया जाएगा।"

कप्तान की यह बात सुनकर पारसी दल के नेता ने पेशकश की, ''कप्तान साहब, हम सभी राजदरबार में हाजिर होना चाहते थे। हम स्वयं ही राजा से विनती करेंगे कि वह हमें अपने देश में बसने की अनुमति दें।'' पुलिस कप्तान इस बात के लिए राजी न हुआ। तब पारसियों के सरदार ने कहा, ''हमारे दो प्रतिनिधियों को ही आप दरबार में जाने की अनुमति दे दें, जिससे वे सारी स्थिति महाराजा के सामने रख दें।''

कप्तान इसके लिए राजी हो गया। पारसियों के दो प्रतिनिधि राजधानी की ओर चल दिए, शेष सभी लोग सीमा पर ही डेरा डालकर बैठ गए।

उन दिनों उस राज्य में यादव राणा का शासन था।उस राजा के चातुर्य का चारों ओर बोलबाला था। लोग कहते कि यह राजा बड़ी-से बड़ी समस्याओं का समाधान चुटकी बजाते ही कर देता है। दो दिन चलने के बाद पारसी प्रतिनिधि राजधानी पहुंचे। दरबार शुरू होने में अभी दो घंटे की देर थी। उन्होंने विश्राम किया और फिर नित्य-कर्म से निपट कर ठीक समय पर दरबार में हाजिर हो गए।

सिंहासन खाली था, शायद राजा अभी पहुंचा नहीं था। प्रधानमंत्री ने इन दोनों पारसी-प्रतिनिधियों से बातचीत की। सारी बात सुनकर उन्हें राजा के आने तक प्रतीक्षा करने को कह प्रधानमंत्री अपने काम में लग गया।

थोड़ी देर बाद जय-जयकार के स्वर गूंजने लगे। प्रतिनिधि समझ गए कि राजा अब पहुंचने वाले हैं। जैसे ही राजा सिंहासन पर बैठा, इन दोनों ने उसे एक लम्बा-सा सलाम किया। इसी बीच प्रधानमंत्री ने राजा को इन दोनों के आने का कारण बता दिया। राजा कुछ क्षण तो सोचता रहा। उसके बाद उसने प्रधानमंत्री को इशारे से अपनी ओर बुलाया और धीरे से कुछ कहकर अन्य दरबारियों से विचार-विमर्श करने लगा।

उधर प्रधानमंत्री पलक झपकते ही दरबार से गायब हो गया। दोनों प्रतिनिधि बड़ी बेचैनी से राजा की ओर देखने लगे। वे चाहते थे कि जैसे ही राजा उन पर नजर डाले वे उससे आज्ञा प्राप्त करने की कोशिश करें। काफी देर तक राजा ने भी उधर नहीं देखा। वे दोनों प्रतिनिधि काफी परेशान से नजर आ रहे थे। तभी प्रधानमंत्री दरबार में हाजिर हुआ। उसके पीछे एक सेवक था, जो रेशमी वस्त्र से ढके एक थाल को हाथों में लिए हुए था। राजा के सामने प्रधानमंत्री ने पहुंच कर वह थाल अपने हाथों में ले लिया। उसी क्षण राजा ने उन दोनों प्रतिनिधियों को अपने पास आने का इशारा किया। इशारा पाते ही दोनों सहमे कदमों से राजसिंहासन के सामने जा पहुंचे।

राजा ने उस थाल में रखे चांदी के कटोरे को उठाया और उसे उन दोनों प्रतिनिधियों को देते हुए कहा, ''हमारा यह उत्तर है। इसे अपने सरदार के पास ले जाओ।'' प्रतिनिधियों ने देखा कि उस चांदी के कटोरे में ऊपर तक दूध भरा हुआ हैं उनकी समझ में कुछ नहीं आया। वे



करते भी क्या। चुपचाप दबे पांव दरबार से चल पड़े सीमा की ओर।

बड़े यत्न से बारी-बारी से वे उस कटोरे को थामे अपने पड़ाव की ओर बढ़ रहे थे। दो दिन की कठिन यात्रा के बाद वे अपने सरदार के सामने जा पहुंचे। सरदार सहित सभी पारसी बड़ी बेचैनी से उन दोनों की प्रतीक्षा कर रहे थे। जैसे ही उन सबकी नजर इन प्रतिनिधियों पर पड़ी, सभी खुशी से नाच उठे। लेकिन जब उन्होंने दोनों प्रतिनिधियों के चेहरों पर खामोशी देखी, तो सभी चिंतित हो गए।

सरदार के पूछने पर उन्होंने दूध से लबालब भरा कटोरा सरदार की ओर बढ़ा दिया सभी लोग उसे देखकर तरह-तरह की अटकलें लगाने लगे। यदि एक ओर वह राजा चतुर था, तो दूसरी ओर पारसियों का मुखिया भी कच्ची गोलियां नहीं खेला था। उसे सारी स्थिति समझते देर न लगी। उसने अपने साथियों से कहा, ''राजा का भेजा हुआ यह दूध का कटोरा इस बात का प्रतीक है कि इस राज्य में पहले से ही जनसंख्या काफी है। इसलिए यहां और गुंजाइश नहीं है।''

सरदार की बात सुन सभी लोगों के चेहरों पर उदासी छा गई सरदार ने सभी के चेहरों को देखा और मुसकराते हुए बोला, ''भाइयो, इसमें चिंता की कोई बात नहीं। इस पहेली का जवाब भी मेरे पास है। आप लोग चिंता न करें। अभी बाजी हमारे हाथ में ही है।'' यह कह कर उसने एक व्यक्ति को दो मुट्ठी शक्कर लाने को कहा। अगले ही क्षण वह आदमी लपकता हुआ शक्कर ले आया। सभी को दिखाते हुए सरदार ने वह शक्कर दूध से लबालब भरे कटोरे में धीरे से छोड़ दी।

सरदार ने उन्हीं दोनों प्रतिनिधियों को बुलाया और उन्हें सारी बात समझाकर फिर राजदरबार में भेज दिया। दोनों व्यक्ति बड़ी मेहनत से दूध के कटोरे को लिए राजदबार में जा पहुंचे। दरबार लगा हुआ था। जैसे ही प्रधानमंत्री ने उन दोनों को दरबार में प्रवेश करते देखा, वह समझ गया कि आज राजा इन्हें फिर यहां देख क्रोध में आ जाएंगे। वह उन्हें भगाने की कोई युक्ति सोच ही रहा था कि तभी राजा की नजर उन दोनों पर पड़ी। कौतूहलवश राजा ने उन दोनों को सीधे अपने पास बुला लिया। सधे कदमों से दोनों राजसिंहासन के सामने जाकर खड़े हो गए।

राजा के पछने पर उन्होंने कहा, ''महाराज, कटोरे के दूध में हमारे सरदार ने दो मुट्ठी शक्कर मिला दी है और कहा है कि ऐसा करने से दूध जरा भी नहीं छलका। शक्कर घुलने से यह और मीठा हो गया है। ठीक इसी प्रकार हम लोग भी आपकी प्रजा के साथ घुल-मिलकर रहेंगे। आपके राज्य पर भार नहीं बनेंगे, बल्कि दूध में शक्कर की तरह मधुर संबंध बनाते हुए साथ-साथ रहेंगे।''

जवाब लाजवाब था। राजा इसे सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने प्रधानमंत्री को आदेश दिया कि सभी पारसी लोगों को सम्मानपूर्वक इस राज्य में बसने दिया जाए।

तीर की उड़ान

बात उस समय की है जब बादशाह मनशेर ईरान पर शासन करता था। उसका अपने पड़ोसी बादशाह से घमासान युद्ध हुआ। ईरान का काफी भाग शत्रुओं के हाथ में चला गया।

युद्ध लंबे समय तक चलता रहा। दोनों पक्ष युद्ध से इतने ऊब चुके थे कि वे किसी ऐसे उपाय की तलाश में लग गए जिससे दोनों पक्षों के साथ न्याय हो सके। ईरान चाहता था कि युद्ध में उसका जो प्रदेश हाथ से निकल गया है, वह उसे वापस मिल जाए।

काफी समय तक दोनों देशों के प्रतिनिधि तरह-तरह के समझौतों पर सोच-विचार करते रहे। कई महीनों बाद इस बात पर समझौता हो गया कि जिस पहाड़ी पर अंतिम युद्ध लड़ा गया था, उसकी चोटी पर चढ़कर कोई ईरानी उत्तर की दिशा में तीर छोड़े। उस तीरंदाज का तीर जहां जमीन पर गिरेगा, वहां से पहाड़ी तक रेखा खींच दी जाएगी। उस रेखा के अंदर आने वाली जमीन ईरान को सौंप दी जाएगी। ईरान इस शर्त को मान गया।

ईरान के बादशाह ने ऐसे बहादुर तीरंदाज की तलाश शुरू करा दी जो अधिक-से-अधिक दूरी तक तीर छोड़ सके। उस जमाने में अटेश नामक तीरंदाज का बड़ा नाम था। यूं देखने में वह सीधा-सादा-सा युवक नजर आता था, लेकिन तीरंदाजी में उसे सचमुच कमाल हासिल था। इस गुण के साथ-साथ वह महान देशभक्त भी था। राजा ने तीर छोड़ने का कार्य इसी युवक को सौंपा।

जिस दिन तीर छोड़ना था, उससे पहली रात को उस युवक ने एक स्वप्न देखा। स्वप्न में धरती मां ने प्रकट होकर अटेश से कहा, "मैं तुममें इतनी शक्ति भर दूंगी कि तू उस दिन कमाल कर दिखाएगा। तेरा तीर पूरी शक्ति के साथ हवा में तैरता हुआ चला जाएगा। इस प्रकार ईरान को युद्ध में खोई सारी जमीन वापस मिल जाएगी। किंतु इस कार्य में तुझे अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा। जैसे ही तीर जमीन को छुएगा, तेरी मृत्यु हो जाएगी।"

अटेश देशभक्त था। उसने इस स्वप्न को अपना सौभाग्य समझा। सुबह उठकर वह स्वप्न की बात याद करके अपने आप से बोला– "अटेश, तेरा जीवन राष्ट्र सेवा में लगे, इससे अच्छा भला और क्या हो सकता है?" मन-ही-मन वह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने धरती मां को प्रणाम किया। सिर पर कफन बांधा और तीर कमान लेकर खुशी-खुशी घर से चल पड़ा। कुछ



ही देर में वह उस पहाड़ी पर जा पहुंचा जहां से उसे तीर छोड़ना था।

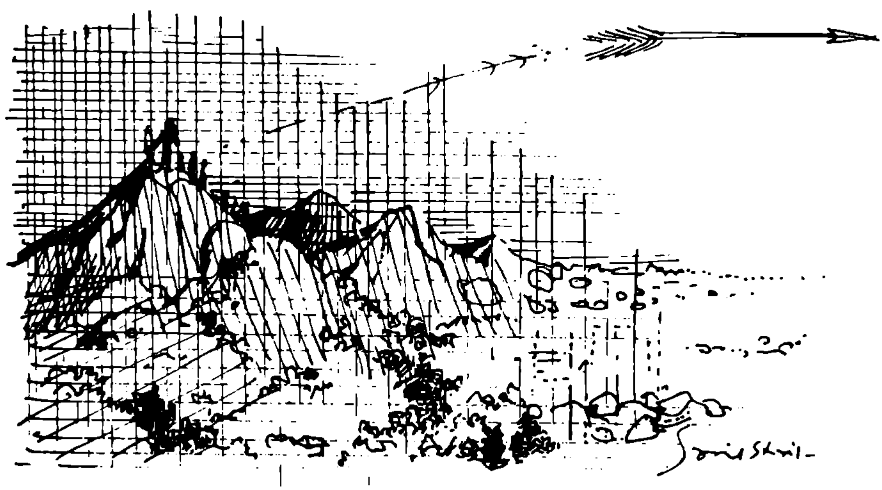
अटेश ने सबसे पहले राजा से भेंट की और स्वप्न के बारे में बताया। उसने कहा- "महाराज! जिस समय तीर जमीन छुएगा, मेरे प्राण-पखेरू उड़ जाएंगे!" लेकिन बादशाह ने उसकी बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया। बादशाह ने केवल उसे स्वप्न कह कर टाल दिया। मगर अटेश को स्वप्न को सच्चाई पर विश्वास था।

निश्चित समय पर अटेश को तीर छोड़ने का आदेश मिला। दोनों ओर के सैनिक अधिकारी तीर की उड़ान को नापने के लिए बेकरार थे। अटेश ने पूरी ताकत के साथ कमान से तीर छोड़ दिया। तीर जैसे ही कमान से छूटा, हवा में तेजी के साथ आगे की ओर उड़ने लगा। तीर बढ़ता ही जा रहा था, रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था।

धीरे-धीरे आधा दिन बीत गया। दोपहर ढलने लगी। कुछ देर बाद तीर एक अखरोट के वृक्ष में धंस गया और फिर उसी में समा गया।

तीर काफी लंबी दूरी तय कर चुका था। ईरानियों की खुशी का ठिकाना नहीं था। शर्त के अनुसार अखरोट के वृक्ष तक रेखा खींची गई। इस रेखा के भीतर इतनी जमीन आ गई जितनी ईरान से युद्ध में खोई भी नहीं थी। इस प्रकार ईरान का अपनी भूमि पर फिर कब्जा हो गया।

बादशाह मनशेर यह सब देखकर बड़ा खुश था। तभी उसका ध्यान अटेश की ओर गया। वह उसकी खोज-खबर लेने के लिए वहां से चल पड़ा। कुछ ही देर में उसे सूचना मिली कि अटेश ने प्राण त्याग दिए हैं।



बादशाह की खुशी गायब हो गई। एक ओर ईरान में खुशी छा गई लेकिन दूसरी ओर अटेश के इस महान बलिदान से सभी के मन में उसके प्रति श्रद्धा बढ़ गई। बादशाह ने अटेश का अंतिम संस्कार पूरे राजकीय सम्मान के साथ कराया। उसकी कब्र पर लिखा गया– "अटेश जिंदाबाद।"

अटेश आज भी अमर है। हर वर्ष अटेश की कब्र पर बड़ा भारी मेला लगता है। अटेश की तीरंदाजी को याद रखने के लिए इस मेले को– 'तीर गान का मेला' –कहकर पुकारा जाता है।

चांदी का पदक

बात बहुत समय पहले की है। इंग्लैंड के बादशाह जेम्स द्वितीय के पौत्र राजकुमार चार्ल्स का युद्ध जार्ज प्रथम के सेनापति से हुआ था। इस ! युद्ध में राजकुमार चार्ल्स की हार हुई थी। वह प्राण बचाने के लिए इधर से उधर भाग रहा था।

सेनापति की ओर से हुक्म जारी किया गया कि जो व्यक्ति राजकुमार चार्ल्स को जीवित या मृत अवस्था में सेनापति के सामने हाजिर करेगा, उसे मुंह-मांगा इनाम दिया जाएगा।

बस फिर क्या था? चारों ओर सैनिक तथा नागरिक राजकुमार चार्ल्स को ढूंढने में जुट गए।

एक दिन शाही सेना के एक कप्तान को यह सूचना मिली कि राजकुमार चार्ल्स अमुक स्थान पर ठहरा हुआ है। सूचना पाते ही कप्तान उस स्थान की ओर लपका। मन में तरह-तरह के मंसूबे बांधते हुए जैसे ही वह कप्तान निश्चित स्थान पर पहुंचा तो पुरस्कार की कल्पना से ही उसके मुंह में पानी भर आया। उसे इस बात का पूरा भरोसा हो चुका था कि राजकुमार चार्ल्स अब उसकी पकड़ से नहीं निकल सकता।

यही सोचकर उसने पूरे जोश के साथ उस जगह प्रवेश किया और चीख पड़ा- "कहां है राजकुमार चार्ल्स? फौरन मेरे सामने हाजिर हो जाओ, वरना टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।" इतना कहते-कहते उसने म्यान से अपनी तलवार खींच ली। जब कुछ क्षणों तक उसे उस स्थान से किसी की भी आवाज सुनाई न पड़ी तो वह स्वयं ही इधर-उधर देखते हुए आगे बढ़ता गया।

ऐसी बात नहीं थी कि राजकुमार चार्ल्स उस स्थान पर नहीं ठहरा था। लेकिन इस कप्तान के वहां पहुंचने से कुछ समय पूर्व ही वह वहां से कहीं और चल पड़ा था।

कई घंटों तक उस स्थान की तलाशी लेने पर भी जब राजकुमार चार्ल्स का कोई निशान न मिला, तब वह बौखलाहट में इधर-उधर हाथ-पैर पटकता हुआ राजकुमार की तलाश में चल पड़ा।

कई घंटों तक यूं ही इधर-उधर भटकने से वह पूरी तरह से थक कर चूर हो गया। उसने सोचा कि उसके भाग्य में बड़ा पुरस्कार नहीं है। इसलिए अच्छा यही होगा कि अब सीधे अपने



घर चला जाए। यह सोचकर वह जैसे ही अगली गली में मुड़ा तो उसकी नजर एक हाइलैंडर बालक पर पड़ी।

कप्तान तेजी से उसकी ओर लपका और उस बालक के पास पहुंचते ही बोला; ''ए बच्चे, क्या तुमने इधर कहीं राजकुमार चार्ल्स को देखा है?'' बारह वर्ष के उस बालक ने कप्तान की बात बड़े धैर्य से सुनी और वह तन कर खड़ा हो गया। वह बिना कुछ बोले कप्तान को घूरे जा रहा था।

कप्तान ने सोचा कि शायद इस बच्चे ने उसकी बात को समझा नहीं है। इसलिए उसने अपनी बात फिर दोहराई। लेकिन वह बालक फिर भी उसी प्रकार सीना ताने खड़ा रहा। यह देख कप्तान की झुंझलाहट बढ़ गई और उसने बालक को झकझोरते हुए राजकुमार चार्ल्स के बारे में बताने को कहा।

बालक जोर से चीखा, ''देखा है लेकिन मैं तुम्हें नहीं बताऊंगा।'' बालक की यह बात सुनकर कप्तान का पारा सातवें आसमान पर जा पहुंचा। वह चीखता हुआ बोला, ''बच्चे, तुम नहीं जानते, मैं कौन हूं? फौरन मेरी बात का उत्तर दो, वर्ना इस तलवार से तुम्हारे शरीर के दो टुकड़े कर दूंगा।''

जब कप्तान ने यह देखा कि बालक पर उसकी डांट का भी कोई प्रभाव नहीं हुआ है, तब उसने झल्लाकर तलवार की म्यान से बालक पर जोर से प्रहार किया। बालक के मुंह से जोर की चीख निकल पड़ी। अब कप्तान को कुछ उम्मीद हुई कि यह बालक डर गया है और अब सब-कुछ बता देगा।

कप्तान ऐसा सोच ही रहा था कि वह बालक फिर जोर से चीखा, ''चोट के कारण मेरे मुंह से चीख अवश्य निकल गई है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि मैंने तुम्हारे सामने घुटने टेक दिए हैं। मैं तुम्हें यह कभी नहीं बताऊंगा कि राजकुमार चार्ल्स किधर गए हैं।'' उसने अपनी बात आगे जारी रखते हुए कहा, ''शायद तुम्हें यह नहीं मालूम कि मेरा जन्म 'मैक्फर्सन' वंश में हुआ है। हमारे वंश की सदैव यह परंपरा रही है कि हम सब-कुछ खोकर भी अपने राजा एवं उसके वंश की रक्षा करते हैं। मुसीबत में फंसे राजकुमार चार्ल्स के साथ विश्वासघात करके मैं उन्हें शत्रु के हाथों में भला कैसे सौंप सकता हूं। ऐसा घृणित कार्य करके मुझे जीवन-भर शांति नहीं मिलेगी।''

कप्तान उस बालक का साहस और राजभक्ति देखकर स्तब्ध रह गया। उस बालक की निडरता और अपने राजा के प्रति इतनी श्रद्धा सचमुच में प्रशंसनीय थी। कप्तान उस बालक से इतना प्रसन्न हुआ कि उसके मुंह से स्वतः ये शब्द निकल पड़े- ''जिस देश के बच्चों में इतना साहस और राजभक्ति हो, भला उस देश का कोई बाल-बांका कर पाएगा!''

यह सोचकर कप्तान ने उस बालक की पीठ बड़े स्नेह से थपथपाई। इतना ही नहीं, कप्तान ने साहसी बालक को पुरस्कृत भी किया। उसने पुरस्कार स्वरूप चांदी का एक पदक उसे भेंट किया और मुस्कराता हुआ वहां से चल पड़ा।

सुनने में आता है कि 'मैक्फर्सन' वंश के लोग आज भी चांदी के उस पदक को सुरक्षित रखे हुए हैं। चांदी का वह 'क्रॉस' केवल उसी वंश के बच्चों के लिए ही नहीं, अपितु समस्त राष्ट्र के बच्चों के लिए साहस और राजभक्ति की प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है।

पेटू राजा

मगध देश का राजा उमराव सिंह अपनी उदारता के कारण बड़ा लोकप्रिय था। उसके राज्य में जनता बड़ी सुखी थी। यूं तो राजा को सभी प्रकार के सुख थे, लेकिन एक प्रकार की कमी उसे हमेशा खटकती रहती थी। बात यह थी कि राजा के कोई सन्तान नहीं थी। उसने सभी उपाय किए, लेकिन संतान का मुंह देखना उसको नसीब नहीं हुआ।

राजा और प्रजा में बहुत निकट सम्बन्ध था। इसलिए राजा के इस दु:ख से जनता भी बड़ी दु:खी रहती थी। जब कभी दरबार में राजा के इस दु:ख की चर्चा होती, तो उपस्थित दरबारियों के चेहरे पर उदासी छा जाती। उसे देखकर राजा धीरे से मुस्करा देता और कहने लगता– "अरे, आप लोग तो बेकार ही चिंतित हो गए। जो–कुछ परमात्मा करता है, ठीक ही करता है। और, फिर आप लोग जब मेरा इतना आदर करते हो, तो क्या संतान का सुख मुझे आप सभी से नहीं मिल जाता?" राजा की यह बात सुनकर सभी लोगों के चेहरे से उदासी गायब हो जाती और राजा की प्रशंसा से सारा वातावरण गूंज उठता।

धीरे–धीरे समय बीतता गया और उसी के साथ–साथ राजा उमराव सिंह भी वृद्ध होते गए। कुछ समय बाद राजा इतने कमजोर हो गए कि वे ठीक प्रकार से शासन का कार्यभार भी नहीं संभाल सकते थे। उन्होंने अपनी दशा को देखते हुए एक दिन सभी दरबारियों को महल में बुलाया। राजा ठीक से बोलने में भी असमर्थ नजर आ रहे थे। यह सब देखकर उपस्थित लोगों की आंखों में आंसू छलक आए। राजा से यह सब न देखा गया और दो मोती उनकी आंखों से लुढ़क पड़े।

कुछ क्षण चारों ओर अजीब–सी खामोशी छा गई। कुछ देर बाद राजा ने धीरे–धीरे बोलना शुरू किया। उन्होंने कहा–"मेरे प्रियजनो, तुम मेरी दशा से किसी प्रकार चिंतित न हों। समय सबसे अधिक बलवान होता है। उसके प्रभाव से न राजा बच सकता है और न प्रजा। मैं सिर्फ इतना कहना चाहता हूं कि जब मेरे प्राण–पखेरू उड़ जाएं तो आप सभी लोग मिल कर इस विशाल देश का शासन चलाएं।"

यह सुनकर सभी लोग रुआंसे–से हो गए। कहने लगे–"महाराज! आप हमारे अन्नदाता



हैं, आप हमारे रक्षक हैं। आप ऐसे मत सोचिए। हम तो केवल आपके स्वामिभक्त बनकर ही इस दुनिया में रहना चाहते हैं।''

इसके कुछ ही दिनों बाद राजा की तबीयत अचानक खराब हो गई। पूरी राजधानी में यह समाचार हवा की तरह फैल गया। लोग भगवान से अपने राजा को जीवन-रक्षा की प्रार्थना करने लगे। एक दिन प्रधानमंत्री ने राजा से पूछा, ''महाराज, यदि आपको कुछ हो जाए तो इतना बड़ा साम्राज्य किसको सौंपें?'' यह सुनकर राजा कुछ क्षण तक सोचते रहे और उसके बाद बोले, ''प्रधानमंत्री जी, मैं जीवनभर लोगों को दान देता रहा हूं। मैं चाहता हूं कि मेरी मृत्यु के बाद जो भी पहला याचक राजमहल का द्वार खटखटाए, उसे मेरा पूरा राज्य सौंप दिया जाए।''

इससे पहले कि प्रधानमंत्री कुछ कहें, उन्होंने देखा कि राजा का शरीर निढाल होता जा रहा है। देखते-ही-देखते उनकी आंखें पथरा गईं। सारे महल में कुहराम मच गया। कोई कर भी क्या सकता था। भला मृत्यु के सामने किसी का वश चलता है?

संयोग की बात कि राजा के मरते ही एक भूखे-प्यासे भिखारी ने भिक्षा के लिए राजमहल के द्वार पर आवाज लगाई। द्वारपालों को पहले से ही आदेश था। उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, ''महाराज! अंदर पधारिए, आप तो अब राजा बनेंगे।''

बेचारे भिखारी ने सोचा कि अब ये सब मिलकर मेरी अच्छी-खासी धुनाई करेंगे। यह सोचते ही वह भागने की कोशिश करने लगा। लेकिन भला द्वारपाल उसे कैसे भागने देते। जब भिखारी ने बच निकलने में अपने को असमर्थ पाया तो सोचा कि अब चुपचाप इनके कहने पर ही चलो। भिक्षा से पेट भर नहीं पाता। चलो, अगर राजा सजा देगा, तो वही सही। कैद में तो भोजन मिलेगा ही।'' यह सोचकर वह चुपचाप उनके साथ महल में चला गया।

अंदर पहुंचकर जब उसे सारी बात समझाई गई तब उसे असली बात का पता चला। वह खुशी से खिल उठा। गुलाबजल से उसे स्नान कराया गया और हीरे-मोती से जड़े बहुमूल्य वस्त्र पहनाए गए। शुभ मुहूर्त में उसका राजतिलक कर दिया गया।

जाड़े का मौसम शुरू हो चुका था। दो-चार दिन बाद राजदरबार लगा। सभी दरबारी और मुखिया दरबार में हाजिर हुए। प्रधानमंत्री ने राजा का अभिवादन किया और कहा, ''महाराज, यह दरबार आपके श्रीचरणों में प्रणाम करता है। सभी उपस्थित लोग आपके आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं।''

भिखारी राजा के सिंहासन पर बैठा हुआ इस पूरे दृश्य को कौतूहल भरी नजरों से देख रहा था। उसने जब आदेश की बात सुनी तो असमंजस में पड़ गया। वह आदेश देने की बात जीवन में पहली बार सुन रहा था। कुछ क्षण के बाद वह बोला- ''अरे हां, आदेश! मैं तो भूल ही गया था। देखो, ऐसा करो कि कहीं से गाय का शुद्ध दूध मंगवाओ और लच्छेदार खीर

का इंतजाम करो। जमाना बीत गया है खीर का स्वाद लिए हुए।''

आदेश अजीब था। सभी दरबारी एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। बेचारे करते भी क्या! महाराज का आदेश जो था। उसका पालन तो करना ही था। सभी राजाज्ञा के पालन में जुट गए। समूची राजधानी में इस नए किस्म के आदेश की चर्चा होने लगी। एक ओर जहां राजमहल में खीर-पूड़ियों के दौर शुरू हो गए वहां पूरे राज्य में लोग मौज-मस्ती मनाने लगे, यही क्रम चलता रहा।

जब गर्मी का मौसम शुरू हुआ तो प्रधानमंत्री ने राजा की अनुमति लेकर ग्रीष्म अधिवेशन की तैयारी शुरू की। निश्चित समय पर दरबार शुरू हुआ। नियम के अनुसार प्रधानमंत्री ने राजा को झुककर प्रणाम किया और निवेदन किया ''महाराज, भविष्य के लिए आपका क्या आदेश है?'' भिखारी राजा ने थोड़ी देर अपना सिर खुजलाया। फिर सोचकर कहा, ''बादामों की ठंडाई घोटी जाए। मैंने बचपन में ही ठंडाई पी थी। साथ में कुछ नए-नए मिष्ठान्न भी तैयार कराए जाएं। बस यही हमारा आदेश है।''

इस आदेश से भी दरबारी चक्कर में पड़ गए। सोचने लगे, यह अच्छा राजा है। किसी नई योजना को सुझाने के स्थान पर केवल खाने-पीने की ही चर्चा करता है। बेचारे वे कर भी क्या सकते थे! अपना-सा मुंह लिए सभी लौट गए। सभी जगह शीतल पेय और मिठाइयां तैयार होने लगीं। हर समय कोई न कोई शीतल पेय और मिठाइयों के थाल लेकर राजा के पास आता रहता।

कुछ महीने बाद सीमा पर तैनात गुप्तचरों ने प्रधानमंत्री को सूचित किया कि पड़ोसी राज्य हमारे देश की वर्तमान स्थिति से पूरी तरह परिचित हो गया है और वह हमारे राज्य को हड़पने की योजना बना रहा है।

यह सुनकर प्रधानमंत्री का सिर चकरा गया। राज्य का सारा कामकाज पहले ही ठप्प था। सेना भी खाने-पीने और मौज उड़ाने में लगी थी। प्रधानमंत्री सोचने लगा कि अब क्या किया जाए। अब तो तुरंत कुछ न कुछ होना चाहिए। ऐसा कुछ भी करने के लिए राजा की आज्ञा लेना जरूरी था।

घबराया हुआ प्रधानमंत्री राजा के पास पहुंचा। उसने सारी बात कही। राजा कुछ देर विचार में डूबा रहा। इसके बाद एक झटके से कह गया- ''प्रधानमंत्री जी, हमें युद्ध से क्या मतलब? हम तो शांतिप्रिय हैं। देखो वर्षा ऋतु हो चुकी है। आप शुद्ध घी और बढ़िया खांड के मालपुए बनवाओ। खाना तो दूर रहा, एक जमाने से मालपुए देखे तक नहीं हैं। और हां, जगह-जगह झूले भी डाले जाएं।'' बेचारा प्रधानमंत्री चुपचाप वहां से लौट गया और राजा के आदेश का पालन करने में जुट गया। पड़ोसी देश के हमले की बात उसने सभासदों से भी कही, लेकिन

सभी मालपुओं में मस्त थे। सभासदों ने भी दो टूक बात कह दी– ''हम क्या करें। राज्य तो ऐसे ही चलेगा जैसे राजा चाहेगा।'' यह सुनकर प्रधानमंत्री भी चुप हो गया।

उधर जब पड़ोसी राजा को यह पूरी तरह से पता चल गया कि मगध देश का राजा और प्रजा ऐश–आराम में मस्त है, तो उसने आक्रमण कर दिया। कुछ ही समय में उसकी सेना सीमा पार करके राजधानी की ओर बढ़ने लगी। राजा से जब यह कहा गया तो उसने मालपुओं के सामने किसी की एक भी नहीं सुनी।

अगले दिन दुश्मन की सेना जब राजधानी के आसपास पहुंच गई तो सभी मंत्री और दरबारी दुहाई देते हुए राजा के पास दौड़े आए। सारी बात सुनकर राजा ने ठंडे दिमाग से कहा, ''प्रधानमंत्री जी, आप क्यों इतने परेशान हो रहे हैं। राज्य में उथल–पुथल तो चलती रहती है। साहस और संयम से काम लें। हम तो, जैसा कि आप जानते हैं, शांतिप्रिय हैं। हमसे यह सब न सुना जाता है और न हम कुछ देख पाएंगे। भाई! हमारा झोली–डंडा हमें दो। हम तो चलते हैं, तुम्हें जो सूझे, वह करो।'' और इतना कहने के बाद वह भिखारी राजा वहां से चलता बना।

दान की महिमा

बहुत पहले की बात है एक नगर में चन्द्रदत्त नामक ब्राह्मण रहता था। वह हीरे-जवाहरात का व्यापारी था। उसका व्यापार खूब जोरों पर चल रहा था। एक बार उसे व्यापार के सिलसिले में बाहर जाना पड़ा। उसने सोचा कि जब इतनी दूर यात्रा पर जा रहा हूं, तो क्यों न कुछ व्यापार करके ही लौटूं। इसी विचार से लाखों रुपये के हीरे -जवाहरात एक जहाज में लेकर वह अपनी यात्रा पर चल पड़ा।



चन्द्रदत्त का जहाज जब समुद्र में लगभग दस किलोमीटर दूर निकल गया तो समुद्र की लहरों में कुछ तेजी-सी दिखाई पड़ी। लहरों में हर क्षण तेजी बढ़ती जा रही थी। यह दृश्य देख चन्द्रदत्त के मन में तरह-तरह के विचार आने लगे। वह सोचने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि मैं समुद्री तूफान में डूब जाऊं। यदि ऐसा हो गया तो क्या गुजरेगी मेरे परिवार पर?

चन्द्रदत्त इस प्रकार की चिंताओं में डूब गया। अगले ही क्षण उसे लगा कि उसका जहाज लहरों की लपेट में आकर हिचकोले ले रहा है। वह समझ गया कि बस अब भयंकर तूफान

आने ही वाला है। हुआ भी ऐसा ही। एक भयंकर गर्जना के साथ मूसलाधार वर्षा शुरू हो गई और जहाज जल में हिचकोले लेने लगा।

थोड़ी ही देर बाद जहाज डूब गया। चन्द्रदत्त अपने समय का अच्छा-खासा तैराक था। वह कई घंटों तक लहरों के साथ समुद्र के भीतरी भाग की ओर तैरता रहा। संयोग की बात कि उसे सामने से एक और जहाज आता दिखाई दिया। चन्द्रदत्त को कुछ आशा बंधी और वह पूरे धैर्य के साथ जहाज की दिशा में तैरने लगा। थोड़ी देर के बाद वह जहाज के समीप पहुंच गया। उस पर सवार लोगों ने चन्द्रदत्त को जीवनदान दिया और इस प्रकार वह बच गया।

जब वह अपने नगर पहुंचा, तो सभी उसे उस हालत में देखकर चकित रह गए। घर पहुंचकर सारी कहानी उसने घर वालों को सुनाई। घरवालों को यही सबसे बड़ा संतोष था कि परिवार पालक तो सही सलामत घर लौट आया है।

उसका सब-कुछ लुट गया था। अब उसने छोटा-मोटा रोजगार शुरू करके अपने परिवार का पालन-पोषण शुरू कर दिया। उसने इतनी निर्धनता के दिन कभी नहीं देखे थे, इसलिए उसे सब-कुछ अजीब-सा लग रहा था। वह हर समय खोया-खोया सा रहता था। इस परिस्थिति ने उसे बुरी तरह से थका दिया वह क्या कर रहा है, यह भी वह भूल जाता। दिन-प्रतिदिन उसकी आर्थिक हालत खराब होती चली गई। इस बीच, जो-कुछ घर में था, वह भी खा पीकर बराबर हो गया।

मजबूर होकर चन्द्रदत्त ने एक सेठ के यहां नौकरी शुरू कर दी। उसने नौकरी तो कभी की नहीं थी, इसलिए वह अधिक समय तक नौकरी पर नहीं रह सका। उसके बाद समस्या यह खड़ी हो गई कि वह अपने बीवी-बच्चों का पेट कैसे भरे। मजबूर होकर उसने मजदूरी शुरू कर दी। इसी बीच वह सख्त बीमार हो गया। बीमारी लम्बे समय तक उसके पीछे पड़ी रही जिससे वह दाने-दाने के लिए तरसने लगा।

एक दिन उसने देखा कि उसके बच्चे भूख से बिलबिला रहे हैं। यह कष्ट उससे न देखा गया। घर से निकला और लोगों से गिड़गिड़ाते हुए सहायता की याचना करने लगा। लेकिन अफसोस, किसी ने भी उसके हाल पर तरस नहीं खाया। निराश हो वह घर लौटने लगा।रास्ते में उसने देखा कि मक्के के खेत में भुट्टे लहलहा रहे हैं। वह उन पर टूट पड़ा। 8-10 भुट्टे लेकर वह घर पहुंचा। सभी खुश हो गए। जल्दी से उन्हें भूना और सब मिलकर एक साथ खाने बैठ गए। जैसे ही उन्होंने खाना शुरू किया, तो दरवाजे पर किसी भिखारी ने दस्तक दी। चन्द्रदत्त फौरन उठा और दरवाजे की ओर बढ़ा।

भिक्षुक कह रहा था कि कई दिन से भूखा है। इस बात को सुनते ही चन्द्रदत्त ने अपने हिस्से के भुट्टे उस भिक्षुक को दे दिए। भिक्षुक वहां बैठे-बैठे भुट्टे खा गया। चन्द्रदत्त की पत्नी के पूछने पर उसने और भुट्टे मांगे। भिक्षुक चन्द्रदत्त की पत्नी का हिस्सा खाने के बाद

भी कहने लगा कि भूख के मारे उसका बुरा हाल है। यह सुनकर चन्द्रदत्त के बेटे ने भी अपना हिस्सा दे दिया और उसे भी वह चट कर या। लेकिन उसकी भूख फिर भी शांत नहीं हुई। तभी चन्द्रदत्त की बेटी बाहर निकली और भिखारी से कहने लगी, ''बाबा, अब यहां से चलते बनिए। यदि आप भूखे हैं, तो हम भी तो भूखे हैं।'' बेटी की बात सुनकर भिक्षुक वहां से चला गया।

अगले दिन चन्द्रदत्त को बहुत तेज बुखार आया, जो उसकी जान लेकर ही गया। धीरे-धीरे उसके परिवार के सभी लोग चल बसे। उन चारों ने दूसरा जन्म लिया। दान की महिमा के कारण चन्द्रदत्त एक विशाल राज्य का सम्राट बना, उसकी पत्नी महारानी और बेटा राजकुमार, बेटी धोबिन बनी।

एक दिन राजा प्रसन्न मुद्रा में अपने दरबारियों से बातचीत कर रहा था। तभी उसने दरबारियों से पूछा, क्या आप में से कोई यह बता सकता है कि मैं किन कारणों से इतने बड़े राज्य का सम्राट बना हूं?'' सभी ने अपने-अपने विचार रखे, लेकिन सम्राट की जिज्ञासा शांत न हो सकी। वह सारे दिन इसी उधेड़बुन में लगा रहा। रात्रि को शयनकक्ष में आने से पूर्व उसे फिर वही विचार आया कि वह इतना सौभाग्यशाली कैसे बना।

यह सोचते-सोचते वह गहरी निद्रा में खो गया। उसे एक स्वप्न आया कि वह महल के बाग में घूम रहा है। सामने के एक कुंज से सफेद पोशाक में एक बूढ़ा व्यक्ति आता है और वह उसे पिछले जन्म का सारा हाल बताते हुए कहता है कि आप सदैव अपने धर्म पर अडिग रहे। सत्य का पालन किया। अपने जीवन की चिंता किए बिना दूसरों के जीवन की रक्षा की। इन्हीं सभी कर्मों के फलस्वरूप आपको इतने बड़े देश का सम्राट होने का सौभाग्य मिला।

सम्राट के पूछने पर उस व्यक्ति ने बताया कि तुम्हारे पूर्व जन्म की पत्नी और पुत्र भी इसी जन्म में तुम्हारे साथ हैं। केवल तुम्हारी बिटिया इसी नगर के धोबी के घर पैदा हुई है। उसका नाम विद्या है और गंगाराम नामक धोबी के यहां है। इसके बाद सम्राट की नींद टूट गई। बाहर देखा तो दिन निकलने वाला था। सूर्योदय होते ही उसने अपनी बेटी की खोज शुरू करा दी। अगले दिन वह भी उससे आ मिली और इस प्रकार सभी एक हो गए। सम्राट इस घटना से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने गरीबों और बेसहारा लोगों की सेवा के लिए अच्छी से अच्छी योजनाएं बनाईं और वह जीवन-पर्यन्त दीन दुखियों की सेवा करता रहा।

बोरी के पैर

यह घटना कई वर्ष पुरानी है। नई दिल्ली के एक स्कूल में लवींद्र नामक एक लड़की रोज की तरह स्कूल पहुंची। दोपहर की छुट्टी होने तक उसने खूब दिल लगाकर पढ़ाई की। जैसे ही दोपहर की छुट्टी की घंटी बजी अन्य बच्चों की भांति वह क्लास से मैदान की ओर भाग खड़ी हुई। घंटी बजते ही स्कूल के मैदान में सैकड़ों विद्यार्थियों की भीड़ लग गई। कुछ बच्चे अलग-अलग दल बनाकर खाना खाने बैठ गए तो कुछ टोलियों में बंटकर नये-नये खेल खेलने में मस्त हो गए।

बच्चों को चाट-पकौड़ी का बड़ा शौक होता है। यही कारण था कि स्कूल के द्वार पर खोमचे वाले तीखी-तीखी आवाज लगाकर अपनी चटपटी चाट की तारीफ कर रहे थे। दही-भल्ले और आलू की चाट का नाम सुनते ही मुंह में पानी भर आता है। अनेक बच्चे खोमचे वालों के चारों ओर जमा होकर चाट-पकौड़ी खरीदने में व्यस्त थे। इसी भीड़ में थी लवींद्र, जो कक्षा छह में पढ़ती थी। वह गोलगप्पे वाले के सामने गोलगप्पे खाने के इंतजार में थी कि तभी उसकी नजर वहां खड़े चार साधुओं पर पड़ी। न जाने क्या बात थी कि लवींद्र का ध्यान गोलगप्पे वाले से हटकर इन साधुओं पर जम गया। साधुओं के कंधों पर बोरियां लटकी हुई थीं।

साधुओं के कंधों पर लटकी बोरियां उसे बड़ी अजीब लग रही थीं। कुछ क्षणों तक देखते रहने के बाद उसे लगा कि बोरियों में पड़ा सामान इधर-उधर हिल रहा है। इससे वह और भी अधिक विस्मित हुई। उसके मन में यह जिज्ञासा हुई कि किसी प्रकार इस बात का पता लगाया जाए कि आखिर इनमें ऐसी क्या चीज बंद है जो अपने आप इधर-उधर हिल रही है?

वह यह सोच ही रही थी कि उसने साधुओं को वहां से खिसकते देख। अधिक विचार किए बिना वह दबे पांव उन चारों साधुओं के पीछे-पीछे चलने लगी। वह ज्यादा दूर तक नहीं चल पाई थी कि उसने देखा एक बोरी से दो नन्हें-नन्हें पैर बाहर निकल आए हैं। वह एक क्षण कुछ झिझकी, लेकिन अगले ही क्षण सारा मामला भांप गई। उसे पता चल गया कि ये साधु नहीं हैं बल्कि बच्चों को चुराने वाले बदमाश हैं। उसने सोचा कि यहीं से जोर से चिल्लाऊं, लेकिन तभी उसे ख्याल आया कि आस-पास कोई भी आदमी नहीं है। कहीं ऐसा न हो कि ये बदमाश मेरी चीख सुनकर यहां से भाग निकलें। इसलिए उपयुक्त अवसर आने तक चुपचाप इनका पीछा करते रहना चाहिए।

लगभग 10-15 मिनट तक उनके पीछे चलते रहने के बाद लवींद्र ने देखा कि कुछ ही दूरी पर एक पुलिस चौकी है। बस फिर क्या था। उसकी आंखों में खुशी की लहर दौड़ गई



वह उसी क्षण दौड़ती हुई पुलिस चौकी जा पहुंची। वहां पहुंचने पर उसने पुलिस को उन बदमाशों की ओर इशारा करते हुए कहा, "अंकल, ये साधु नहीं हैं, बल्कि साधु के वेष मे चोर-उचक्के हैं। इनके कंधों पर लटकी बोरियों में छोटे-छोटे बच्चे बंद हैं जो अन्दर छटपटा रहे हैं।"

उस बालिका की सारी बात सुनकर पहले तो पुलिस को विश्वास नहीं हुआ, लेकिन जब उसने फिर अपनी बात पर जोर दिया तो फौरन पुलिस उस ओर भागी जिस ओर उस लड़की ने साधुओं को जाते देखा था। मुश्किल से 15-20 मिनट ही लगे होंगे पुलिस को उनहें पकड़ लाने में।

उन बदमाशों को पुलिस चौकी पर लाया गया। उनसे पूछा कि उनकी झोलियों में क्या सामान है? मामला नाजुक था। भला वे बदमाश आसानी से अपनी झोलियों में भरे सामान के बारे में कैसे बता देते? उन्होंने अपनी ओर से पूरी कोशिश की कि पुलिस को असली मामले का पता न चल सके। लेकिन भला वे कितनी देर तक चकमा देते? जैसे ही पुलिस उन पर टूटी, तो वे वहां से भागने की कोशिश करने लगे। बस फिर क्या था। उन चारों को पुलिस ने दबोच लिया और जब उनकी बोरियों को खोला गया, तो उनमें से चार मासूम बच्चे निकले। चारों बच्चों को उन बदमाशों ने बुरी तरह से रस्सी से बांधा हुआ था। उनके मुंह पर कपड़े की पट्टी बांधी गई थी जिससे उनकी चीख-पुकार न निकल सके।

लवींद्र ने सचमुच साहस और बहादुरी का कार्य किया। उसने अपनी चिंता न करके बच्चों को चुराने वाले उन चारों बदमाशों को पकड़वा दिया। जब इस लड़की की साहस भरी इस कहानी का पता लगा, तो सरकार ने उसे साहस और बहादुरी के कार्य के लिए पुरस्कार प्रदान किया।

शेर से युद्ध

हमारे देश में मणिपुर नाम का एक राज्य है। उसके एक गांव में तोगो पाओ कूकी नाम का एक निर्धन व्यक्ति रहता है। उसके पास खेती के लिए जमीन नहीं है। उसका मुख्य काम जंगल से लकड़ी काटकर लाना है। उसे वह दुकानदारों को बेचता है और उससे जो कुछ आमदनी होती है, उसी से वह अपना और अपने परिवार का भरण-पोषण करता है। उसका एक लड़का है, जिसका नाम है खोपो कूकी। यूं कहने को उसकी उम्र मुश्किल से 15 वर्ष की है, लेकिन उसने जिस बहादुरी का परिचय इस उम्र में दिया, वह सभी के लिए आश्चर्य की बात बन गई।

हुआ यह कि रोज की तरह एक दिन दोनों बाप-बेटे जंगल में लकड़ी की तलाश में निकल पड़े। अपने गांव से कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर स्थित पेंगनोल नामक पहाड़ी पर जब वे इधर-उधर लकड़ी की तलाश में व्यस्त थे, तो उन्हें एक भयंकर गर्जना सुनाई दी। जिसे सुनकर वे एकदम स्तब्ध रह गए। कुछ क्षणों तक वे जहां के तहां खड़े रहे और शेर की ताक-झांक में लग गए। उन्हें आशा थी कि कुछ ही क्षणों में शेर उनकी नजर में आ जाएगा। जब करीब 15-20 मिनट तक उन्हें सिंह की गर्जना सुनाई न पड़ी तो वे आश्वस्त हो गए कि शेर ने अपना मार्ग बदल लिया है और वह किसी ओर मुड़ गया है।

यही सोचकर तोगो पाओ कूकी और उसका बेटा खोलो कूकी फिर अपने कार्य में व्यस्त हो गए। वे मुश्किल से 15 मिनट ही अपना काम कर पाए होंगे कि बराबर की झाड़ी से दहाड़ता हुआ एक शेर उन पर झपटा। पलक झपकते ही दोनों इधर-उधर छिटक गए। शेर छलांग मारता हुआ दूसरी ओर निकल गया। दोनों ने भगवान का शुक्रिया अदा किया, सोचा, चलो जान बची।

जब बाप-बेटे सतर्क हो गए। तोगो पाओ कूकी ने अपनी बंदूक संभाल ली और अपने बेटे को सावधान करता हुआ सहमे कदमों से आगे बढ़ने लगा। उन दोनों ने तय किया कि अब उस पहाड़ी को छोड़ आगे बढ़ना चाहिए। यह सोचकर वे दोनों मुश्किल से आधा किलोमीटर तक ही चल पाए होंगे कि वह आदमखोर शेर निकला और तोगो पाओ कूको पर टूट पड़ा। कूकी ने अपनी बंदूक शेर पर दागी, लेकिन अफसोस कि उसने गोली नहीं चली। इससे अच्छा अवसर उस आदमखोर को क्या मिलता! वह कूकी पर टूट पड़ा। कूकी के होश गुम हो गए और वह दूर छिटक कर जा गिरा।



उस समय तक शेर पूरे गुस्से में आ चुका था। तोगो पाओ कूकी पर शेर जिस तरह गुर्रा रहा था, उसे देख तोगो को अपने बचने की कोई उम्मीद नजर नहीं आ रही थी। उसे केवल सहारा था तो अपने बेटे खोपो कूकी का, जो शेर के पीछे कुछ ही दूरी पर घात लगाए बैठा था। बाप ने बेटे को जोर से आवाज लगाई, ''बेटा खोपो, यदि बचा सकता है तो मुझे बचा ले।''

भला ऐसा कौन बेटा होगा जो ऐसी मुसीबत में अपने पिता के जीवन की रक्षा के लिए न कूद पड़े? पिता की पुकार सुनते ही खोपो कूकी की रगों में खून तेजी से दौड़ने लगा। वह चाहता था कि बस काल बनकर उस आदमखोर शेर पर टूट पड़े। उसने अपने हाथ में तेज कुल्हाड़ी को जोर से पकड़ा और पूरी ताकत से उस शेर पर वार किया।

उसने पहला वार शेर की पीठ पर किया। बिजली की तेजी से वह शेर की पीठ से लेकर गर्दन तक तेज कुल्हाड़ी के कई वार दनादन करता चला गया। शेर ने चारों ओर घूमकर अपने शिकार पर काबू पाना चाहा, लेकिन खोपो कूकी के प्रहारों से उसका दम खुश्क होता चला गया। शेर के सामने पड़ा उसका भयभीत पिता अपने बेटे को अद्भुत साहस देखता रहा।

लगभग 15-20 मिनट तक शेर और खोपो कूकी का जमकर युद्ध चलता रहा। बालक की बहादुरी और साहस दोनों रंग लाए। शेर की कमर, गर्दन और मुंह पर कुल्हाड़ी के प्रहारों से खून वह निकला। कुछ ही देर में वह लंबा-तड़ंगा शेर जमीन सूंघने को मजबूर हो ाया।

उन दोनों ने देखा कि अब शेर बुरी तरह से परास्त हो गया है। सोचा कि अब इसे छोड़ हम लोग यहां से चल पड़ें। लेकिन अगले ही क्षण खोपो कूकी ने अपने पिता से कहा ''जब तक मैं इसे पूरी तरह खत्म नहीं कर देता, तब तक यहां से टलने वाला नहीं हूं। यदि यह बच गया तो हो सकता है कि और लोगों के जीवन के लिए खतरा बन जाए।'' यह कहते ही उसने अपनी तेज कुल्हाड़ी से उस समय तक भरपूर वार किए जब तक शेर ने पूरी तरह से दम नहीं तोड़ दिया।

उसके बाद बेटे ने पिता को संभाला। तोगो पाओ घायल भी हो गया था। उसके दाएं बाजू में शेर के पंजे से गहरा घाव हो गया था। बालक खोपो कूकी ने अपने मफलर से पिता के घाव पर कसकर पट्टी बांधी और वहां से सोलह किलोमीटर दूर काकचिंग अस्पताल में ले जाकर उसका इलाज कराया। इस घटना का पता जब सरकार को लगा तो उसने बालक खोपो कूकी को वीरता और साहस के लिए पुरस्कार प्रदान किया।

साहसी बालक

घटना बंबई नगर की है। नगर के मुख्य भाग से लगभग बीस किलोमीटर की दूरी पर एक उपनगर है, जिसका नाम घाटकोपर है। इसी बस्ती में एक बहादुर लड़का रहता है, जिसका नाम है मुकेश। रोज की तरह मुकेश शाम को छुट्टी के बाद घर लौट रहा था। कंधे पर बस्ता लटकाए वह मस्ती के आलम में गीत गुनगुनाता घर की ओर तेजी से लौट रहा था।

स्कूल से कुछ ही दूर पहुंचा होगा कि एक जाना-पहचाना आदमी एकदम उसका रास्ता रोक कर खड़ा हो गया। मुकेश के आगे बढ़ते कदम अचानक रुक गए। एक झटके के साथ उसने ऊपर देखा तो व्यक्ति जाना पहचाना लगा। इससे पहले कि मुकेश उससे कुछ पूछे, वह व्यक्ति चेहरे पर घबराहट का भाव लाते हुए बोला, "अरे मुकेश! गजब हो गया!! तेरे पिताजी एक सड़क दुर्घटना में बुरी तरह से घायल हो गए हैं। वह इस समय ईस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे पर बेहोश पड़े हैं। चल मेरे साथ तेजी से चल।"

अपने पिता के बारे में ऐसा दुखद समाचार सुनकर मुकेश एकदम घबरा गया। उसके होश गुम हो गए। कुछ क्षण तक यूंही खड़ा सोचता रहा। जैसे ही उस व्यक्ति ने उससे फिर चलने का आग्रह किया, तो उसने उससे पहले घर जाने की बात कही। मुकेश ने कहा कि पहले मैं घर जाकर अपनी माताजी को यह सूचना दे दूं और उन्हें भी साथ लेकर 'हाइवे' पर चलेंगे। वह व्यक्ति इस स्थिति से निबटने के लिए पहले ही तैयार था। बोला, "अरे मुकेश! तेरी माताजी को तो मैं कहकर आ ही रहा हूं। वह तो अब तक घटनास्थल पर पहुंच भी गई होंगी।" अब मुकेश की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। वह चुपचाप उस व्यक्ति के साथ हो लिया।

लगभग एक घंटे तक दोनों चलते रहे। 'हाइवे' के शुरू होने से पहले ही एक बस्ती आती है 'कन्नमवार नगर'। बस्ती नई-नई बनी है। कुछ मकान पूरी तरह से बन चुके हैं तो कुछ अधबने पड़े हैं। वह व्यक्ति मुकेश को एक ऐसे ही अधबने मकान में ले गया। मुकेश के पूछने पर उसने बताया कि तुम्हारे पिता को इसी मकान की ऊपरी छत पर लिटाया गया है। चलो ऊपर चलें। उस व्यक्ति का इशारा पाते ही मुकेश खटाखट सीढ़ियां चढ़ता हुआ ऊपर पहुंच गया।

इससे पहले कि सबसे ऊपर की छत पर पहुंचकर वह अपने पिताजी के बारे में पूछता, उस व्यक्ति ने जब से लंबा चाकू निकाला और उसे खोलकर उसकी गर्दन पर रख दिया। यह देख मुकेश के होश गुम हो गए और वह बुरी तरह से हांफने लगा। डर के कारण उसका सारा



शरीर कांप रहा था। चेतावनी देते हुए उस व्यक्ति ने मुकेश से कहा, ''यदि जरा भी आवाज निकाली, तो तुम्हारी गर्दन के पार यह चाकू कर दिया जाएगा।''

विवश होकर मुकेश नीचे बैठ गया। इसके बाद उस व्यक्ति ने अपनी कमर में बंधी लंबी रस्सी खोली और उससे मुकेश के हाथ और पैर जकड़ कर बांध दिए। मुकेश के मुंह से आवाज भी न निकले, इसके लिए कपड़े की पट्टी भी उसके मुंह पर बांध दी। मुकेश को इस हालत में छोड़ वह व्यक्ति वहां से चल दिया। कन्नमवार नगर से पहले वह अपने घर गया और उसने मुकेश के पिता के नाम एक पत्र लिखा जिसमें उनसे दस हजार रुपए देने के लिए कहा गया था। पत्र में लिखा था, ''यदि दस हजार रुपए न दिए गए, तो मुकेश को हमेशा के लिए गहरी नींद सुला दिया जाएगा।'' पत्र को जेब में रख वह पास की चाय की एक दुकान पर गया और चाय पीने लगा।

उधर मुकेश सारी स्थिति को भांप गया था। वह जानता था कि उसकी सहायता के लिए कोई भी उस सुनसान खाली मकान में नहीं आएगा। उसने सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि वह बदमाश आ जाए और उसके जीवन को ही खत्म कर दे। इतना सोचते ही उसका सारा शरीर सिहर उठा। कुछ ही क्षणों में उसने तय कर लिया कि चाहे कुछ भी हो, वह इस स्थान से चल देगा। हाथ-पैर बुरी तरह रस्सी से जकड़े हुए थे। इसकी जरा भी परवाह किए बिना वह लुढ़कता हुआ सीढ़ियों तक आ गया।

एक-एक करके वह दो मंजिल नीचे उतर आया। उसके हाथ-पैर भी छिल गए। उनसे खून टपकने लगा। लेकिन मुकेश ने इसकी जरा भी परवाह न की। भाग्य की बात कि सबसे नीचे की सीढ़ियों तक उतरते-उतरते उसके हाथ-पैरों की रस्सी थोड़ी ढीली हो गई। मुंह पर बंधी पट्टी भी ढीली हो गई थी। मुकेश ने जोर-जोर से चीखना शुरू कर दिया- ''बचाओ, बचाओ।''

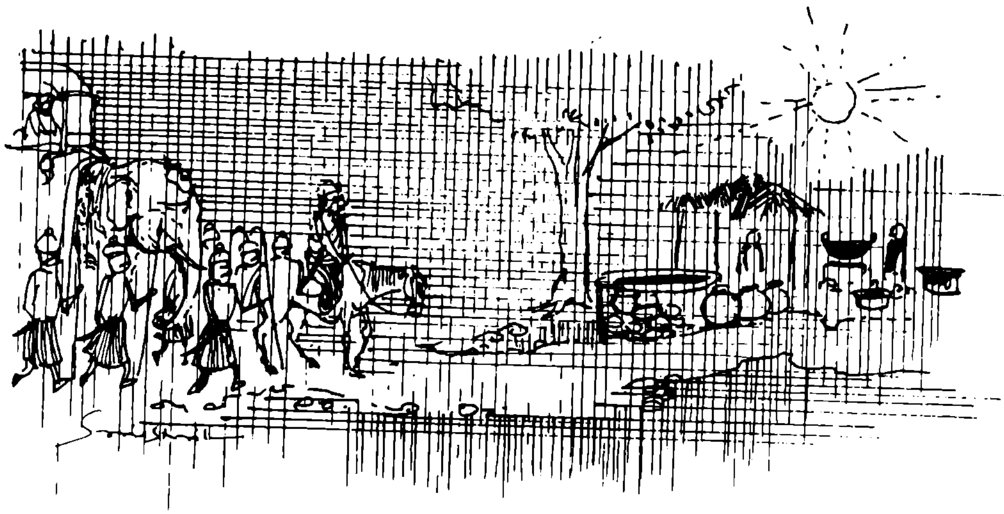
मुकेश की चीख उस निर्माणाधीन मकान के चौकीदार तक पहुंची जिसे सुनकर वह ढूंढ़ता-ढूंढ़ता मुकेश के पास पहुंच गया। चौकीदार ने मुकेश की हालत से सारी स्थिति का अंदाजा लगा लिया। चौकीदार के साथ मुकेश पास की पुलिस चौकी पर गया और सारी बात पुलिस को बता दी। मुकेश ने पुलिस को यह भी बताया कि वह उस बदमाश को अच्छी तरह से पहचानता है।

बस, फिर क्या था। पुलिस जीप में सवार वे सभी उस बदमाश की तलाश में निकल पड़े। जब वे मुकेश की कालोनी में पहुंचे, तब उसकी नजर अचानक एक होटल पर जाकर रुक गई। उसने देखा कि वहीं वह बदमाश बैठा चाय की चुस्की भर रहा है। तत्काल उसने, पुलिस इंस्पैक्टर को उस बदमाश की ओर इशारा करते हुए बताया कि यही है वह बदमाश। इंस्पैक्टर ने दौड़कर उसे दबोच लिया।

तलाशी लेने पर चन्द्रसेन नामक उस बदमाश के पास मुकेश के पिता के नाम लिखा पत्र बरामद हुआ, जिसममें मुकेश की वापसी के लिए दस हजार रुपये की मांग की गई थी। आनन-फानन पुलिस ने चन्द्रसेन और उसके गिरोह के सभी साथियों को गिरफ्तार कर लिया। मुकेश को उसके माता-पिता को सौंप दिया गया। ग्यारह वर्षीय इस बालक ने साहस से काम लेकर जहां अपने जीवन की रक्षा की, वहां बदमाशों को भी पुलिस के हवाले करवा दिया।

सेवा का फल

पाण्डवों को चौदह वर्ष के बनवास में न जाने कितने कष्ट उठाने पड़े थे। लेकिन सबसे अधिक कष्ट उन्हें तब हुआ जब बनवास से लौटने पर कौरवों ने उनका अपमान किया। हुआ यह कि पाण्डवों ने कौरवों से कहा कि वे उनका राज्य उन्हें लौटा दें। जब लालची कौरव इस पर राजी न हुए तो पाण्डवों ने उनसे यह अनुरोध किया कि वे राज्य का एक बड़ा भाग अपने पास रख लें और उन्हें थोड़ा भाग दे दें जिससे वे भी सम्मानपूर्वक अपना भरण-पोषण कर सकें।



लालच बुरा होता है। भला हाथ में आए राज्य को कौरव पाण्डवों को कैसे सौंप देते? कौरवों के इस व्यवहार से पाण्डवों को बड़ा दुख हुआ। धीरे-धीरे पाण्डवों के मन में कौरवों के प्रति शत्रुता का भाव बढ़ने लगा। दोनों पक्षों में तनाव बढ़ता गया। एक पक्ष दूसरे पर आक्रमण करने की योजना बनाने लगा।

बस फिर क्या था? एक ओर कौरव अपने मित्र देशों से फौजी साज-सामान की सहायता ले रहे थे तो दूसरी ओर पाण्डव इस कोशिश में थे कि अपने सगे-संबंधियों से सैनिक सहायता प्राप्त की जाए।

पाण्डवों ने एक दिन महाराजा शल्य को सहायता का प्रस्ताव भेजा, तो वे तत्काल अपनी सेना लेकर पाण्डवों के पास चलने को तैयार हो गए। शल्य की बहन का विवाह पांडु से हुआ था। इस नाते नकुल और सहदेव (पाण्डवों के दो भाई) महाराजा शल्य के भानजे थे। इसी रिश्ते के कारण पाण्डवों को शल्य पर बड़ा भरोसा था।

कौरवों के प्रमुख दुर्योधन को जब यह पता चला कि महाराजा शल्य पाण्डवों की ओर से युद्ध क्षेत्र में उतरेंगे तो उसे बड़ी चिंता हुई। वह इस उधेड़बुन में लगा हुआ था कि किसी प्रकार से महाराजा शल्य पाण्डवों का साथ न देकर कौरवों के साथ मिल जाएं। उसने महाराजा शल्य के पास अनेक लोगों को भेजा, लेकिन शल्य अपने निर्णय पर अटल रहे।

दुर्योधन को एक उपाय सूझा। उसने अपने गुप्तचर भेजकर इस बात का पता लगाया कि महाराजा शल्य की सेना किन-किन मार्गों से होकर युद्धस्थल पर पहुंचेगी। जब दुर्योधन को यह पता चल गया, तो उसने अपने राज्य के बड़े-बड़े इंजीनियरों एवं कारीगरों को साथ लिया और उन मार्गों पर, जहां से शल्य की सेना को गुजरना था, नये-नये विश्राम भवन बनवा दिए।

दुर्योधन ने इस बात का पूरा ध्यान रखा कि महाराजा शल्य और उनकी सेना को किसी प्रकार की असुविधा न हो। जगह-जगह शीतल जल के प्याऊ खुलवा दिए। विश्राम भवन में स्वादिष्ट भोजन की व्यवस्था कराई गई। सैनिकों के दिल बहलाव के लिए रंगारंग कार्यक्रमों की व्यवस्था की। साथ ही वहां अपने चतुर सेवकों को तैनात कर दिया।

महाराजा शल्य का पड़ाव जिन-जिन स्थानों पर पड़ा, वहां उन्होंने सभी प्रकार के सुख-साधनों को देख आश्चर्य का अनुभव किया। उन्होंने सोचा कि पाण्डव बड़े समझदार हैं। उन्होंने हमारी सेना की सुख-सुविधा का पूरा ध्यान रखा है।

हर पड़ाव पर शल्य की सेना का खूब स्वागत किया गया। अच्छे-अच्छे भोजन, विश्राम की उत्तम व्यवस्था और मनोरंजन के काग्रक्रमों ने शल्य को अत्यधिक प्रसन्न कर दिया।

हस्तिनापुर से पहले का पड़ाव महाराजा शल्य को बहुत पसन्द आया। जगह-जगह स्वादिष्ट भोजन की व्यवस्था, शीतल जल के प्याऊ, हरे-भरे मैदान में बना सुंदर विश्राम भवन, सभी कुछ तो था वहां। शाम को सभी ने जमकर भोजन किया। उसके बाद नृत्य और गायन का भव्य कार्यक्रम हुआ। चारों ओर लोग प्रसन्नता से झूम रहे थे। महाराजा शल्य भी गद्‌गद हो रहे थे। उसी समय उन्होंने आदेश दिया, "महाराज युधिष्ठिर के उन सेवकों को पेश किया जाए, जिन्होंने हमारी सेना के लिए इतनी सुंदर व्यवस्था की है। हम उन सभी लोगों को पुरस्कार देना चाहते हैं, जिन्होंने कठिन श्रम से जंगल में मंगल कर दिखाया।"

महाराजा शल्य को इतना प्रसन्न देख वहां उपस्थित दुर्योधन ने सोचा कि इससे बढ़िया अवसर हाथ नहीं आ सकता। फौरन इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए। यदि इस समय जरा भी चूक गया, तो महीनों की मेहनत मिट्टी में मिल जाएगी।

यही सोच दुर्योधन हाथ जोड़ता हुआ महाराजा शल्य के सम्मुख पेश हो गया और बोला– ''मामा जी, प्रणाम। आपको मार्ग में किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं हुआ।'' दुर्योधन को अपने सामने देख महाराजा शल्य चौंक पड़े और बोले, ''अरे दुर्योधन, तुम? क्या यह सारी व्यवस्था तुम्हारी ही है?''

उत्तर में दुर्योधन ने उसी प्रकार श्रद्धाभाव से उत्तर दिया, ''यह आपके इसी भक्त के प्रयास हैं। गुरुजनों की सेवा करना छोटों का धर्म है। भला मैं इस अवसर को आपकी सेवा किए बिना कैसे जाने देता?''

दुर्योधन के इस उत्तर से महाराजा शल्य बड़े प्रसन्न हुए उन्होंने मुस्कराते हुए कहा, ''वत्स, हम तुमसे बड़े प्रसन्न हैं। बोलो, हमसे क्या चाहते हो?'' दुर्योधन को इससे बढ़िया अवसर और क्या मिलता। वह तुरन्त उनके चरणों में बैठ गया और बोला, ''महाराज! मेरी प्रार्थना है कि आप युद्ध में मेरी सेना का संचालन करें।'' शल्य स्तब्ध, लेकिन वह कर भी क्या सकते थे। वचनबद्ध जो हो गए थे। अपने वचन के अनुसार उन्होंने युद्ध स्थल में कौरवों की सेना का संचालन किया।

दोस्ती

संगीता का मन जब कभी खेलने का होता, वह चुपके से बराबर के खाली मकान में टूटी दीवार से कूद जाती! यूं वह मकान भूतघर के नाम से मोहल्ले में मशहूर था। न जाने कितने वर्षों से वह यूं ही खाली पड़ा था। मोहल्ले के बच्चे अक्सर यह कहते सुने जाते कि वहां दिन के ठीक बारह बजे कुछ भूत ऊपर के कमरे में खाना खाते हैं। कुछ बच्चों का विश्वास था कि रात का अंधेरा होते ही उस भूतघर से तरह-तरह की आवाजें आती हैं और रात को वहां भूतों का नाच होता है।

संगीता इस प्रकार की बातों पर जरा भी ध्यान नहीं देती थी। उसे तो उस मकान से प्यार हो गया था। सुबह स्कूल जाती। खूब मन लगाकर पढ़ती। स्कूल से लौटकर जल्दी-जल्दी खाना खाकर चुपके से उस खाली मकान में पहुंच जाती।

उसे वहां की हर चीज प्यारी लगती। मकान के चारों ओर बेतरतीबी से बढ़ती हुई घास और जंगली पौधे उसे बड़े अच्छे लगते। उन पौधों पर जब रंग-बिरंगे फूल खिलते तो संगीता का मन खुशी से खिल उठता और वह हिरन के बच्चे की तरह कुलांचे भरती हुई घण्टों वहां खेलती रहती। ऊपर के खुले कमरे में उसे बैठना बहुत अच्छा लगता, खास तौर से जब वर्षा होती तो वह उसी कमरे में बैठी घंटों बाहर के दृश्य का नजारा लेती रहती। वर्षा की बूंदे घास और पौधों के पत्तों पर गिरतीं तो उसे अधिक भाती। इसीलिए वर्षा रुक जाने पर वह छलांगें मारती हुई टूटे-फूटे जीने से मैदान में उतर आती और अपनी नन्हीं-नन्हीं उंगलियों से मोती जैसी वर्षा की बूंदों को छेड़ने लगती।

संगीता को भूतघर से इतना लगाव हो गया कि उसका मन दिन-रात वहीं बैठे रहने को चाहता। यदि उसका बश चलता, तो वह सारा समय वहीं बिताती। वहां उसे कोई रोकने-टोकने वाला नहीं था। जहां मन होता बैठ जाती, जहां इच्छा होती लेट जाती। कभी भाग रही है तो कभी धीरे-धीरे टहल रही हैं। कभी धीरे-धीरे मुस्करा रही है तो कभी जोरों से अट्टहास कर रही है। इस प्रकार वह टूटा-फूटा मकान और उसके चारों ओर का मैदान संगीता की अपनी दुनिया बन चुका था, जहां सिर्फ उसी की चलती थी।

मोहल्ले के बच्चे अक्सर उससे पूछा करते- "संगीता, तुम हम लोगों के साथ क्यों नहीं खेलती? क्यों घूमती रहती हो उस भूतघर में? यदि कभी भूतों ने तुम्हें देख लिया तो बस-।"



यह सुनकर संगीता मन ही मन मुस्कराती, लेकिन चेहरे पर डर का भाव लाती हुई कहती– "अरे, तुम्हें क्या पता। मैं तो चुपके से कई बार भूतों को देख भी चुकी हूं। वे तो मुझे प्यार करते हैं। चलो, एक दिन तुम्हें भी मिलवाऊंगी।" संगीता की यह बात सुनकर सभी बच्चों के चेहरों पर डर का भाव आ जाता और वे चुपचाप एक-एक करके वहां से खिसक जाते।

एक दिन उसे सुबह-सुबह उस मकान से खटपट की आवाज सुनाई दी। वह सहमी हुई टूटी दीवार के पास पहुंची तो देखा कि कुछ लोग अपना सामान उस मकान के सामने उतार रहे हैं। उत्सुकतावश उसने अपनी मां से पूछा तो उसे पता चला कि जिनका यह मकान है, वे ही लोग इसमें रहने आए हैं। संगीता यह सुनते ही सुस्त हो गई। उसे उन लोगों का यहां पहुंचना अच्छा नहीं लगा। कुछ देर बाद उसे स्कूल जाना पड़ा। लेकिन पढ़ाई के स्थान पर उसके दिल और दिमाग पर वही बात खटकती रही। वह बार-बार अपने आप से प्रश्न करती रही, "क्यों आ गए ये लोग उस मकान में? क्या वे जहां से आए हैं; वहां कभी वापस नहीं जाएंगे?"

स्कूल से थकी-हारी वह घर पहुंची। वहां पहुंचते ही उसी टूटी दीवार के पास पहुंची और देखा कि अब उन लोगों ने अपना सामान कमरों में लगा लिया है। नीचे मुंह लटकाए वह अपनी मां के पास गई और पूछा, "क्या ये लोग अब कभी यहां से नहीं जाएंगे?" मां ने कहा, "बेटी ये लोग बम्बई में थे। अब वहां से अपना कारोबार समेट कर यहां आ गए हैं। अब वे हमेशा-हमेशा के लिए अपने मकान में ही रहेंगे।"

संगीता को यह सब जानकर बड़ा बुरा लगा। बेचारी कर भी क्या सकती थी। जब भी उसका मन करता, वह टूटी दीवार के पास जाकर चुपचाप खड़ी हो जाती और वहां से उस मकान और उस हरे-भरे मैदान को देखती रहती।

जो लोग उस मकान में रहने आए हैं, उनमें दो बच्चे भी हैं। दोनों ही संगीता से बड़े हैं। उन्होंने एक दिन संगीता को टूटी दीवार के पास खड़ा देखा तो इशारा करके उसे बुलाया। लेकिन संगीता मुंह बिचकाकर लौट आई।

एक दिन उसकी मां ने कहा, "बेटी, इन बच्चों से दोस्ती कर लो, अच्छे बच्चे हैं।" यह सुनते ही संगीता चीख पड़ी– "नहीं, मां ये लोग अच्छे नहीं हैं। इन्होंने मेरे मकान पर कब्जा कर लिया है।" उसकी मां धीरे से मुस्कराती हुई बोली, "बेटी मकान तो उन्हीं का हैं" और संगीता बिना कुछ कहे वहां से खिसक गई।

कुछ दिन बाद उसने देखा कि उस मकान के सभी लोग घूमने जा रहे हैं। यह देख उसे अजीब-सी खुशी हुई। उन लोगों के जाने के बाद वह एक ही छलांग में उस मकान में दाखिल हो गई और इधर-उधर छलांगें मारने लगी। ऐसा करते उसे 10-15 मिनट ही हुए होंगे कि मकान मालिक का कुत्ता भौंकता हुआ उसकी ओर लपका। कुत्ते को दूर से ही देख संगीता घबरा गई और इससे पहले कि कुत्ता उसके पास पहुंचे, वह हड़बड़ा कर वहां से भागी और अपने

मकान में जा पहुंची। उसे उस समय बहुत गुस्सा आ रहा था। उसे उस कुत्ते से भी नफरत हो गई।

कुछ समय बाद उन लोगों ने मैदान में उगी घास और जंगली फूलों के पौधों को भी उखाड़ फेंका। यह देख संगीता को बड़ा दुख हुआ। जिन पौधों को वह अपने नन्हें हाथों से प्यार से सहलाती थी, उन्हें वे लोग बेरहमी से उखाड़ कर फेंक रहे थे। इसके बाद संगीता के मन में उन सभी लोगों के प्रति और घृणा हो गई।

जहां तक संगीता के माता-पिता का संबंध था, वे बराबर के मकान वालों से प्राय: मिलते रहते। उन लोगों की आपस में खूब पटती। एक-दो बार संगीता भी अपनी मां के साथ उन लोगों के यहां गई। वहां जाकर उसे नए-नए पौधों को करीब से देखा। फूलों को हाथ से छुआ, तो उसे उन लोगों को डांट सुननी पड़ी। इसके बाद तो संगीता ने कसम खा ली कि वह कभी उन लोगों के घर नहीं जाएगी।

लगभग एक महीने बाद दशहरे का त्यौहार आया। संगीता की मां ने कहा बेटी, तुम पड़ोसी के घर के दोनों बच्चों से दोस्ती कर लो। देखो, परसों हम लोग एक साथ पिकनिक पर जाएंगे। परसों दशहरा है। हम लोग यमुना नदी में भी स्नान करेंगे।" संगीता झुकने वाली नहीं थी। उसे तो वे बच्चे एक नम्बर के दुश्मन नजर आते थे।

निश्चित समय पर दोनों परिवार पिकनिक पर चल दिए। बड़े लोग तो आपस में खूब बातचीत करते रहे, लेकिन संगीता उन बच्चों से एक शब्द भी नहीं बोली। दोपहर होते-होते वे लोग नदी तट पर पहुंचे। स्नान किया और फिर जमकर भोजन। बुजुर्ग तो भोजन करने के बाद चादरें बिछा कर लेट गए। लेकिन भला बच्चे एक स्थान पर कैसे टिकते! दोनों बच्चे रस्सी के बड़े-बड़े टुकड़े लेकर नदी तट पर खेलने लगे और अकेली संगीता किनारे-किनारे घूमती आगे की ओर बढ़ती जा रही थी।

कुछ दूर चलने के बाद उसने नदी के खुले और चौड़े किनारे पर लाल-पीले फूलों वाले जंगली पौधे देखे। फूलों की खूबसूरती ने उसका मन मोह लिया। वह संभलते कदमों से उन पौधों के पास पहुंची। उसने दो-चार फूल तोड़े और वहां से जैसे ही चलने को हुई तो एकदम घबरा कर रह गई। कोशिश करने पर भी उसके पैर आगे नहीं बढ़ रहे थे। दोनों पैर दलदल में फंस गए थे। वह चीखी, चिल्लाई। लेकिन उसे कोई भी आस-पास नजर न आया।

वह पैर निकालने की जितनी कोशिश करती, उतना ही पैर दलदल में फंसता जाता। आस-पास के जंगली पौधों को पूरी शक्ति से पकड़े वह बचाओ-बचाओ की आवाज लगाती रही, लेकिन उसकी आवाज किसी तक नहीं पहुंची।

दूसरी ओर के दोनों बच्चे सोच रहे थे कि घमंडी लड़की नजर नहीं आ रही, न जाने कहां चली गई। यही सोच वे उछलते-कूदते नदी तट पर आगे बढ़ने लगे। 10-15 मिनट चलते रहने

के बाद उन्हें ''बचाओ...बचाओ'' की पुकार सुनाई पड़ी। दोनों हड़बड़ाकर नदी के नीचे की ओर देखने लगे। अचानक उनकी नजर संगीता पर पड़ी। वे उसे बचाने के लिए तेजी से नीचे की ओर बढ़ने लगे। तभी संगीता की आवाज सुनाई पड़ी– ''नहीं, नहीं, इधर मत आओ, मेरी तरह से तुम भी दलदल में फंस जाओगे''। दोनों बच्चे समझदार थे। उन्होंने फौरन अपने हाथों में रस्सी के टुकड़ों में गांठ लगाई और संगीता की ओर फेंक दिया। संगीता ने रस्सी को अपनी कमर में कसकर बांध लिया और दोनों ने जोर लगाकर उसे खींच लिया।

संगीता जैसे ही बाहर किनारे पर पहुंची, वह वहीं धम्म से गिर पड़ी और बुरी तरह से रोने लगी। दोनों बच्चे उससे पूछ रहे थे, ''संगीता, तुम्हें चोट लगी है क्या? बताओ कहां लगी है?'' और संगीता थी कि रोये ही जा रही थी। बेचारे वे बच्चे क्या जानते थे कि संगीता के ये आंसू पश्चाताप के हैं। जिन्हें वह अपना दुश्मन समझती थी, उन्होंने ही आज उसके प्राण बचाए। इस घटना के बाद तीनों में गहरी दोस्ती हो गई और वे हमेशा एक दूसरे को अपना दोस्त मानते रहे।

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

ISBN : 81-230-0832-5
मूल्य : 30.00 रुपये

इस पुस्तक में सुप्रसिद्ध बाल कथाकार श्री राधेश्याम शर्मा ने देश-विदेश से ग्यारह उन प्रतिनिधि कहानियों का संकलन किया है जो मनोरंजन के साथ-साथ बालकों का चरित्र निर्माण कर सकें। आशा है, ये कहानियां हमारे बाल पाठकों को अवश्य पसंद आएंगी।

